International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

# दहेज से संदेह तक: प्रेमचंद के उपन्यास 'निर्मला' में आर्थिक पराधीनता, पितृसत्तात्मक नियंत्रण एवं स्त्री-अस्मिता का आलोचनात्मक अध्ययन

**डॉ प्रियंका शर्मा**
प्रोफेसर, एलबीएस कॉलेज हरदा (म. प्र.)

**सारांश**
प्रेमचंद का उपन्यास 'निर्मला' हिंदी कथा-साहित्य में दहेज, अनमेल विवाह और स्त्री-जीवन की विडंबनाओं का अत्यंत महत्त्वपूर्ण पाठ है। सामान्यतः इसकी विवेचना दहेज-विरोधी सामाजिक उपन्यास अथवा एक निष्कलंक स्त्री की करुण कथा के रूप में की जाती रही है। प्रस्तुत शोधलेख का आग्रह यह है कि 'निर्मला' की त्रासदी को केवल एक विवाह-संबंधी कुरीति का परिणाम मानने से उसके भीतर सक्रिय आर्थिक और मनोवैज्ञानिक सत्ता-संबंध अस्पष्ट रह जाते हैं। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि विवाह के निर्णय में स्त्री की अनुपस्थिति, परिवार की प्रतिष्ठा से जुड़ा खर्च, आर्थिक पराश्रय, पति की आयुजनित असुरक्षा, स्त्री के आचरण की निगरानी और संवादहीनता परस्पर मिलकर किस प्रकार जीवन-विनाशक परिस्थिति उत्पन्न करते हैं। मूल उपन्यास के चयनित परिच्छेदों का समीक्षात्मक एवं व्याख्यात्मक पाठविश्लेषण किया गया है और उसे स्त्री-विमर्श तथा प्रेमचंद संबंधी प्रकाशित अध्ययनों के आलोक में परखा गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि निर्मला की चुप्पी सहज स्वीकृति नहीं, बल्कि असमान पारिवारिक व्यवस्था में अपनी गरिमा बचाने की विवश रणनीति है। मंसाराम का निष्कासन, जियाराम का आक्रोश, सियाराम का घर छोड़ना और निर्मला की आर्थिक चिंता एक ही परिवार की अलग-अलग घटनाएँ नहीं, बल्कि टूटते विश्वास की क्रमिक अवस्थाएँ हैं। इस प्रकार 'निर्मला' सामाजिक यथार्थवाद के साथ-साथ घरेलू सत्ता, नैतिक संदेह और स्त्री-अस्मिता के जटिल संबंधों का गहन साहित्यिक प्रतिपादन करती है।

**बीज शब्द:** प्रेमचंद, निर्मला, दहेज-प्रथा, आर्थिक पराधीनता, पितृसत्ता, स्त्री-अस्मिता, पारिवारिक संदेह, सामाजिक यथार्थवाद।

## 1. प्रस्तावना

हिंदी उपन्यास के विकास में प्रेमचंद ने कथा-वस्तु को मनोरंजन और कल्पनालोक की सीमाओं से निकालकर सामाजिक जीवन के कठिन प्रश्नों से जोड़ा। उनके साहित्य में व्यक्ति की आकांक्षाएँ और समाज की संस्थागत अपेक्षाएँ एक-दूसरे के सामने उपस्थित होती हैं। परिवार, विवाह, प्रतिष्ठा, संपत्ति और नैतिकता जैसी संस्थाएँ वहाँ स्थिर आदर्श नहीं, बल्कि ऐसे मानवीय संबंध हैं जिनके भीतर प्रेम तथा प्रभुत्व, सहयोग तथा दबाव, सम्मान तथा अपमान एक साथ काम करते हैं। 'निर्मला' इस दृष्टि से विशिष्ट है कि इसका अधिकांश संघर्ष घर की चारदीवारी के भीतर घटता है, किंतु उसके कारण व्यापक सामाजिक संरचना में निहित हैं। उपन्यास का निजी संसार वस्तुतः एक सार्वजनिक समस्या को प्रत्यक्ष करता है।

राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय में उपलब्ध विवरण के अनुसार 'निर्मला' का धारावाहिक प्रकाशन 'चाँद' पत्रिका में नवंबर 1925 से दिसंबर 1926 के बीच हुआ था; ग्रंथरूप प्रकाशन के लिए 1927 का उल्लेख भी प्रचलित है (राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय। इस प्रकाशन-परिप्रेक्ष्य का महत्त्व है। बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में स्त्री-शिक्षा, बाल-विवाह, दहेज, विधवा-जीवन और सामाजिक सुधार से जुड़े प्रश्न बौद्धिक बहस का हिस्सा बन

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

रहे थे। प्रेमचंद ने ऐसे प्रश्नों को किसी घोषणापत्र के रूप में नहीं, बल्कि पात्रों के व्यवहार, गलत निर्णयों, आकांक्षाओं और परिणामों के माध्यम से सामने रखा।

उपन्यास के केंद्र में पंद्रह वर्ष की निर्मला है। प्रारंभ में उसका विवाह भुवनमोहन से तय होता है, पर पिता उदयभानुलाल की मृत्यु के पश्चात परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। आर्थिक अभाव और सामाजिक प्रतिष्ठा के दबाव के बीच उसका विवाह आयु में काफी बड़े विधुर मुंशी तोताराम से कर दिया जाता है। तोताराम के तीन पुत्र हैं—मंसाराम, जियाराम और सियाराम। नई गृहस्थी में निर्मला की भूमिका पत्नी और लगभग समवयस्क युवक की विमाता के रूप में एक साथ निर्मित होती है। इसी असंगति से अविश्वास, संकोच, अपमान और पारिवारिक विघटन की प्रक्रिया तीव्र होती है (प्रेमचंद, 1927/उपलब्ध डिजिटल पाठ, परिच्छेद 1 तथा 5)।

सामान्य कथासार में घटनाओं का यह क्रम पर्याप्त प्रतीत हो सकता है, किंतु आलोचनात्मक प्रश्न इससे आगे है। क्या निर्मला की पीड़ा का कारण केवल दहेज है? क्या संदेह एक व्यक्ति का स्वभाव है या असमान दांपत्य की सामाजिक परिणति? क्या परिवार में स्त्री के त्याग की प्रशंसा उसके निर्णय-अधिकार को सीमित कर देती है? क्या आर्थिक निर्भरता और चरित्र-संबंधी शंका एक-दूसरे को पुष्ट करती हैं? इन्हीं प्रश्नों के आधार पर वर्तमान अध्ययन प्रेमचंद की कथा-दृष्टि में निहित संरचनात्मक आलोचना को स्पष्ट करने का प्रयास करता है।

## 2. पूर्ववर्ती साहित्य की समीक्षा और शोध-अंतर

'निर्मला' पर केंद्रित शोध का एक महत्त्वपूर्ण प्रवाह दहेज एवं अनमेल विवाह को उसकी केंद्रीय सामाजिक समस्याएँ मानता है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की अध्ययन-सामग्री 'निर्मला : परिवेश और संरचना-शिल्प' में उपन्यास के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक परिवेश को एक-दूसरे से संबद्ध मानकर पढ़ा गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद का समाजचित्र केवल निजी दुःख का वर्णन नहीं है; उसमें मध्यवर्गीय आर्थिक आडंबर, रूढ़ियाँ और पारिवारिक अस्थिरता सक्रिय कारक हैं (इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय)। इसी प्रकार चक्रवर्ती (2025) विवाह को पितृसत्तात्मक संघर्ष का क्षेत्र मानते हुए निर्मला की परिस्थिति में दांपत्य असमानता तथा संदेह की भूमिका रेखांकित करते हैं।

स्त्री-मनोविज्ञान की दृष्टि से विभा तिवारी और आभा तिवारी (2018) ने 'सेवासदन' और 'निर्मला' की नायिकाओं की प्रतिक्रियाओं में अंतर देखा है। उनका निष्कर्ष संकेत करता है कि समान सामाजिक कुरीतियों का प्रभाव सभी स्त्रियों में एक जैसा नहीं होता; प्रतिरोध और सहनशीलता की भिन्न स्थितियाँ पात्रों की सामाजिक सीमाओं से भी जुड़ी हैं। त्यागी और जूही (2025) ने 'निर्मला' में आदर्श गृहिणी तथा आत्मबलिदानी स्त्री की छवि की समीक्षा करते हुए बताया कि त्याग का महिमामंडन स्वयं स्त्री के व्यक्तित्व को नष्ट करने वाली अपेक्षाओं को ढँक सकता है। सोफिया देवी (2025) ने सामाजिक नियमों, गरीबी, अनमेल विवाह और घरेलू अविश्वास के सम्मिलित प्रभाव पर बल दिया है।

समकालीन हिंदी आलोचना में सी. मोहना (2026) ने 'निर्मला' को स्त्री-सशक्तिकरण, सामाजिक न्याय और नारीवादी विमर्श के संदर्भ में पढ़ा है। गुप्ता (2024) ने यद्यपि 'कर्मभूमि' और 'गोदान' पर अपना अध्ययन केंद्रित किया है, किंतु प्रेमचंद के साहित्य में विवाह-संस्था के भीतर सम्मान, स्वतंत्रता तथा लैंगिक असमानता के प्रश्न को समझने की सैद्धांतिक दिशा दी है। योगुर्त (2026) ने प्रेमचंद की कहानियों में परिवार को सहयोग और नियंत्रण के परस्पर-विरोधी स्थल के रूप में समझाया है। यह दृष्टि 'निर्मला' की पारिवारिक संरचना को भी नए सिरे से समझने में उपयोगी है।

इन अध्ययनों से महत्त्वपूर्ण आधार प्राप्त होते हैं, फिर भी प्रस्तुत लेख का विशिष्ट आग्रह घटनाओं के बीच कारणात्मक संबंध को क्रमबद्ध ढंग से देखने का है। दहेज की आर्थिक व्यवस्था, विवाह में असमान शक्ति-

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

संबंध, तोताराम का संदेह, मंसाराम की मानसिक पीड़ा, घर के भीतर स्त्री की सीमित वाणी तथा बाद की आर्थिक तंगी—इन सबको अलग-अलग समस्याओं के बजाय एक संचयी प्रक्रिया के रूप में समझा गया है। इसे किसी पूर्ववर्ती शोध की पूर्ण अनुपस्थिति का दावा नहीं, बल्कि उपलब्ध विमर्श में एक सुसंगत पाठ-केंद्रित विश्लेषण जोड़ने का प्रयास माना जाना चाहिए।

## 3. अध्ययन के उद्देश्य, पद्धति एवं सैद्धांतिक आधार

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य हैं—'निर्मला' में दहेज और आर्थिक निर्भरता के पारस्परिक संबंध की पहचान करना; पितृसत्तात्मक निर्णय-प्रक्रिया तथा दांपत्य-संदेह की भूमिका स्पष्ट करना; निर्मला की चुप्पी, मातृत्व और आत्मसम्मान के अंतर्विरोधों का विश्लेषण करना; तथा पारिवारिक विघटन की घटनाओं को सामाजिक-मानसिक संदर्भ में समझना। इसके साथ उपन्यास की कथन-शैली, संवाद, प्रतीक, पूर्वाभास और करुणात्मक संरचना को भी अध्ययन के दायरे में रखा गया है।

यह गुणात्मक, पाठ-आधारित साहित्यिक अध्ययन है। प्राथमिक स्रोत प्रेमचंद का 'निर्मला' है; मूल पाठ के लिए निःशुल्क उपलब्ध डिजिटल संस्करण और परिच्छेदवार विकिस्रोत पाठ का मिलान किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में प्रकाशित शोधलेख, विश्वविद्यालयीय अध्ययन-सामग्री और स्त्री-संबंधी सैद्धांतिक अध्ययन शामिल हैं। विश्लेषण में समीक्षात्मक, व्याख्यात्मक तथा संदर्भपरक पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। घटनाओं से जुड़े अर्थों को पाठ की सीमा में रखकर विवेचित किया गया है; पात्रों को आधुनिक चिकित्सकीय निदान देना या कथा को संपूर्ण भारतीय समाज का सांख्यिकीय प्रतिनिधि मानना उद्देश्य नहीं है।

सैद्धांतिक स्तर पर यह लेख पितृसत्ता को केवल किसी एक पुरुष की कठोरता नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था के रूप में देखता है जिसमें संसाधन, निर्णय और नैतिक मूल्यांकन के अधिकार असमान रूप से वितरित रहते हैं। चक्रवर्ती (1993) ने भारतीय सामाजिक संरचनाओं के अध्ययन में जाति, वर्ग और लैंगिक नियंत्रण की परस्पर संबद्धता की ओर ध्यान दिलाया है। चटर्जी (1989) के घरेलू तथा सार्वजनिक क्षेत्रों के विमर्श से यह समझने में सहायता मिलती है कि घर को नैतिक पवित्रता का क्षेत्र घोषित करने से उसके भीतर विद्यमान असमानताएँ स्वतः समाप्त नहीं हो जातीं। इन अवधारणाओं का उपयोग यहाँ पृष्ठभूमि के रूप में है, उपन्यास पर यांत्रिक रूप से किसी एक सिद्धांत को आरोपित करने के लिए नहीं।

## 4. दहेज और विवाह: आर्थिक व्यवस्था का नैतिक आवरण

'निर्मला' के आरंभिक प्रसंगों में विवाह एक पारिवारिक उत्सव के रूप में तैयार किया जा रहा है। भुवनमोहन के पिता खुलकर दहेज का आग्रह न करने की बात कहते हैं, किंतु बारात के स्वागत-सत्कार तथा प्रतिष्ठा को महत्त्व देते हैं। इस स्थिति में आर्थिक लेन-देन का दबाव केवल घोषित माँगों से नहीं बनता; मान-सम्मान, सामाजिक तुलना और संभावित उपहास का भय भी उसे जन्म देता है। उदयभानुलाल की संपन्न दिखने वाली स्थिति और संचय की कमी के बीच यही तनाव मौजूद है। विवाह का आयोजन जितना सार्वजनिक गौरव का प्रश्न बनता है, उतनी ही बेटी की भावी सुरक्षा परिवार की आर्थिक सामर्थ्य पर निर्भर दिखाई देती है (प्रेमचंद, परिच्छेद 1)।

कल्याणी इस खर्चीली व्यवस्था पर प्रश्न उठाती है। वह छोटी बेटी कृष्णा के भविष्य तथा परिवार की उपलब्ध धनराशि का विचार करती है। पति-पत्नी के बीच यह मतभेद साधारण गृहकलह नहीं है। इसका केंद्र घरेलू अर्थव्यवस्था पर किसकी बात मान्य होगी, यह प्रश्न है। कल्याणी का तर्क परिवार की दीर्घकालिक सुरक्षा से जुड़ा है, लेकिन उसका आर्थिक विवेक भी पुरुष-प्रतिष्ठा के सामने संदेह के घेरे में आ जाता है। यहाँ पितृसत्ता

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

को केवल स्त्री के प्रति प्रत्यक्ष कठोर व्यवहार में नहीं, बल्कि तर्कसंगत परामर्श के अवमूल्यन में भी देखा जा सकता है।

उदयभानुलाल की आकस्मिक मृत्यु और पहले से निश्चित वैवाहिक संबंध का टूटना विवाह-बाजार की वास्तविकता उजागर करता है। परिवार की आर्थिक स्थिति बदलते ही कन्या का सामाजिक मूल्यांकन भी बदल जाता है। निर्मला का व्यक्तित्व, शिक्षा, स्वभाव अथवा उसकी आकांक्षाएँ निर्णय का केंद्र नहीं बनतीं। दहेज इस अर्थ में केवल वस्तुओं और मुद्रा का विनिमय नहीं, बल्कि एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जो लड़की के भविष्य को संपत्ति से जुड़े अनुमान के अधीन कर देती है। कथानक इस विडंबना को उजागर करता है कि परिवार जिस विवाह को सम्मान की रक्षा समझता है, वही लड़की की गरिमा और सुरक्षा को अस्थिर कर सकता है।

दहेज-विरोधी दृष्टि का गंभीर अर्थ केवल लालची वरपक्ष की निंदा करना नहीं है। प्रश्न यह भी है कि माता-पिता प्रतिष्ठा के दबाव में अपनी सामर्थ्य से अधिक व्यय क्यों करना चाहते हैं, आर्थिक संकट के समय लड़की की सहमति क्यों गौण हो जाती है, तथा वृद्ध या अनमेल वर को क्यों एक सुविधाजनक समाधान मान लिया जाता है। 'निर्मला' इन प्रश्नों का उत्तर किसी भाषण में नहीं देती; वह निर्णयों के दुष्परिणामों को कथा के माध्यम से पाठक के सामने रखती है।

**5. अनमेल विवाह और स्त्री की निर्णयहीनता**

निर्मला का विवाह तोताराम से होने के समय आयु, अनुभव और पारिवारिक भूमिकाओं का स्पष्ट असंतुलन है। तोताराम आर्थिक रूप से स्थापित, सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित तथा तीन पुत्रों के पिता हैं, जबकि निर्मला स्वयं किशोरावस्था से युवावस्था की ओर बढ़ रही है। विवाह के साथ ही उससे परिपक्व पत्नी, गृह-प्रबंधक और विमाता के दायित्व निभाने की अपेक्षा की जाती है। उसका निजी भावलोक, प्रेम के प्रति स्वाभाविक आकांक्षा और नए जीवन से जुड़ी आशंकाएँ सामाजिक व्यवस्था में पृथक महत्त्व नहीं पातीं (प्रेमचंद, परिच्छेद 5)।

उपन्यास के आरंभ में निर्मला अपनी छोटी बहन से कहती है—"हम लड़कियां हैं, हमारा घर कहीं नहीं होता।" यह कथन किसी तत्कालीन घरेलू रूठने का ही संकेत नहीं है; इसमें स्त्री के निवास और अधिकार का मूलभूत प्रश्न समाहित है। जन्म का घर उसका स्थायी अधिकार-क्षेत्र नहीं माना जाता, जबकि विवाह के बाद जिस घर में वह जाती है, वहाँ भी उसका स्थान दूसरों की अनुमति और अपेक्षाओं से निर्धारित होता है। इस प्रकार घर-परिवर्तन की सामाजिक रस्म स्त्री की अस्मिता के अस्थायित्व का रूपक बन जाती है (प्रेमचंद, परिच्छेद 1)।

अनमेल विवाह को केवल आयु-अंतर से परिभाषित करना पर्याप्त नहीं होगा। आयु-अंतर अपने आप में हर संबंध को असफल नहीं बनाता, किंतु यहाँ निर्णय की असमानता, अनुभवगत दूरी और भावनात्मक संवाद का अभाव उसे विनाशकारी बनाते हैं। तोताराम निर्मला के लिए उपहार, सुविधाएँ और बाह्य स्नेह जुटाते हैं, लेकिन उसके मन की स्वतंत्र गति को समझने की कोशिश कम दिखाई देती है। जहाँ संबंध में पारस्परिक विश्वास होना चाहिए, वहाँ अपेक्षित प्रेम की प्राप्ति एक पक्ष की असुरक्षा और दूसरे पक्ष के संकोच का स्रोत बनने लगती है।

निर्मला के सामने विकल्पों का अभाव इस संघर्ष को और तीव्र करता है। सामाजिक रूप से वह विवाह के निर्णय को बदलने की स्थितियों से वंचित है; आर्थिक रूप से उसके पास स्वतंत्र जीवन-निर्वाह का आधार नहीं; नैतिक रूप से उस पर आदर्श पत्नी बनने का दबाव है। इसलिए उसका दांपत्य बाहरी व्यवस्था के अनुसार चलता है, किंतु भीतर से परस्पर संतोष का संबंध निर्मित नहीं कर पाता। प्रेमचंद यहाँ स्त्री की व्यक्तिगत असफलता नहीं, बल्कि निर्णयहीनता के सामाजिक परिणाम को सामने लाते हैं।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

### 6. आर्थिक पराधीनता: सुरक्षा से असुरक्षा तक

'निर्मला' में धन एक बार दिखाई देने वाला कारण नहीं है। प्रारंभिक दहेज-संकट के बाद भी आर्थिक प्रश्न अनेक रूपों में लौटता है—गृहस्थी का प्रबंध, बच्चों की शिक्षा, सम्मान बचाने के प्रयास, मुकदमों से प्राप्त आय, गहनों का महत्व और अंततः जीवन-निर्वाह की चिंता। इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक निर्भरता केवल विवाह-पूर्व संकट नहीं; वह स्त्री के पूरे वैवाहिक जीवन की दिशा प्रभावित करती है। आर्थिक साधनों पर नियंत्रण के बिना घरेलू जिम्मेदारियाँ निभाने की अपेक्षा निर्मला की स्थिति को विडंबनापूर्ण बनाती है।

तोताराम की आय तथा आयु उन्हें घर का वैध निर्णयकर्ता बनाती हैं। प्रारंभ में निर्मला को सुविधा उपलब्ध कराने के बावजूद यह व्यवस्था उसके निर्णय-अधिकार का विस्तार नहीं करती। घर के संसाधनों का प्रबंध करने वाली स्त्री और उनके अंतिम स्वामित्व का दावा करने वाले पुरुष के बीच अंतर बना रहता है। परिवार का आर्थिक आधार कमज़ोर पड़ने पर इसका सबसे गहरा प्रभाव उसी स्त्री पर पड़ता है, जिस पर दैनिक जीवन की व्यवस्था की जिम्मेदारी भी है। इस प्रकार आर्थिक पराश्रय और घरेलू श्रम का संबंध एकतरफा उत्तरदायित्व में बदलता जाता है।

पच्चीसवें परिच्छेद में पति की अनुपस्थिति और जमा धन के कम होने पर निर्मला की चिंता अत्यंत तीव्र हो जाती है। वह खर्च में कठोर कटौती करती है; बच्ची की आवश्यकताओं तक पर चिड़चिड़ाहट उभरती है। प्रेमचंद लिखते हैं—"जब हृदय जलता है, तो वाणी भी अग्निमय हो जाती है।" यह पंक्ति निर्मला के व्यवहार को केवल स्वभावगत कठोरता का परिणाम मानने से रोकती है। आर्थिक अभाव के साथ जुड़ी अनिश्चितता, अकेलापन और भविष्य का भय उसके व्यक्तित्व में परिवर्तन लाते हैं (प्रेमचंद, परिच्छेद 25)।

आर्थिक पराधीनता के इस चित्रण में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्त्री की नैतिकता को भी संसाधनों से अलग करके नहीं समझा जा सकता। निर्मला आरंभ में स्नेहमयी, संयत और उत्तरदायी दिखाई देती है, किंतु लगातार असुरक्षा से घिरे जीवन में उसकी सहनशक्ति क्षीण होती है। इस बदलाव को उसके चरित्र का पतन कह देना पर्याप्त नहीं; यह देखना आवश्यक है कि उसे बिना किसी स्थिर सुरक्षा-जाल के घर की सभी अपेक्षाओं का भार उठाना पड़ रहा है। कथा आर्थिक संकट को भावनात्मक संकट से आंतरिक रूप से जोड़ती है।

7. तोताराम का संदेह: पितृसत्तात्मक सत्ता और पुरुष-असुरक्षा

तोताराम को एकरेखीय खलनायक मान लेने से उपन्यास की मनोवैज्ञानिक जटिलता कम हो जाएगी। वे परिवार के प्रति कुछ वास्तविक जिम्मेदारियाँ निभाते हैं और निर्मला को प्रसन्न करने के प्रयत्न भी करते हैं। किंतु अपनी पत्नी से बहुत अधिक आयु तथा पुत्र मंसाराम की युवावस्था का बोध उनके भीतर असुरक्षा को जन्म देता है। सातवें परिच्छेद में दर्पण के सामने स्वयं को देखकर उनका असहज होना अर्थपूर्ण प्रसंग है। दर्पण केवल देह की उम्र नहीं दिखाता; वह वैवाहिक असमानता का ऐसा सत्य सामने रखता है जिसे आर्थिक सुविधा और सामाजिक प्रतिष्ठा से छिपाया नहीं जा सकता (प्रेमचंद, परिच्छेद 7)।

यहाँ एक निर्णायक अंतर उभरता है। तोताराम की व्यक्तिगत असुरक्षा स्वयं में नैतिक अपराध नहीं, लेकिन वह जब स्त्री के आचरण का अनुचित मूल्यांकन और पुत्र के जीवन पर नियंत्रण करने लगती है, तब विनाशकारी बन जाती है। वे निर्मला के सहज व्यवहार को स्वतंत्र मानवीय संपर्क के रूप में देखने के बजाय वैवाहिक निष्ठा के संदेह में बदल देते हैं। सत्ता-संबंध असमान होने के कारण उनकी आशंका विचार तक सीमित नहीं रहती; वह घर के व्यवहार और अन्य सदस्यों के भविष्य को प्रभावित कर सकती है।

निर्मला का मंसाराम से अंग्रेजी सीखना अध्ययन, संवाद और पारिवारिक निकटता का एक साधारण प्रसंग है। किंतु तोताराम उसे संदेह की दृष्टि से लेते हैं। स्त्री का ज्ञानार्जन भी जब किसी पुरुष-आधारित निगरानी में आ

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

जाए तो उसका अर्थ बदल जाता है। स्वयं को कमतर समझने वाला पति, पत्नी को स्वतंत्र अध्ययन-संबंध का अधिकार देने के बजाय उसकी निकटता को संभावित चुनौती मान सकता है। प्रेमचंद इस स्थिति में केवल ईर्ष्या नहीं, बल्कि स्त्री के आचरण की व्याख्या का अधिकार किसके पास है, यह केंद्रीय प्रश्न सामने लाते हैं।

तोताराम के संदेह की सबसे गंभीर परिणति यह है कि वे संवाद के स्थान पर दूरी को समाधान मानते हैं। मंसाराम को घर से दूर छात्रालय भेजने का निर्णय उनके अधिकार-क्षेत्र में है, किंतु इस निर्णय का मानसिक भार एक किशोर पुत्र और निर्मला दोनों को वहन करना पड़ता है। दांपत्य असमानता इस प्रकार पीढ़ियों के बीच विश्वास को भी प्रभावित करती है। व्यक्तिगत संदेह एक संस्थागत पारिवारिक निर्णय बन जाता है—यही पितृसत्तात्मक सत्ता का व्यावहारिक रूप है।

**8. मंसाराम प्रसंग: मातृत्व का अपराधीकरण और विश्वास का विघटन**

'निर्मला' में मंसाराम का चरित्र दांपत्य-संदेह की मानवीय कीमत को बहुत तीव्रता से सामने लाता है। वह निर्मला के प्रति प्रारंभिक आदर और निकटता विकसित करता है, किंतु उसे घर से अलग करने की योजना का कारण ज्ञात न होने पर उसके मन में भ्रम उत्पन्न होता है। वह समझने लगता है कि नई माता उसे परिवार से हटाना चाहती हैं। परिणामस्वरूप मातृत्व का संबंध, जिसे स्नेह और सुरक्षा से जुड़ना चाहिए, उसके अनुभव में संदेह और संभावित निष्कासन की भाषा ग्रहण करने लगता है (प्रेमचंद, परिच्छेद 8)।

इस घटना की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि तीनों व्यक्तियों को पूर्ण सत्य उपलब्ध नहीं है। तोताराम अपनी शंका को सत्य मानते हैं; मंसाराम निर्मला को उत्तरदायी समझता है; और निर्मला पुरुष-प्रभुत्व वाले घर में खुले प्रतिवाद की सीमाओं से जूझती है। संवादहीनता के कारण सभी की पीड़ा बढ़ती जाती है। यह केवल दुर्भाग्यपूर्ण गलतफहमी नहीं; इसका स्रोत वह व्यवस्था है जिसमें मुखिया का संदेह दूसरों के स्पष्टीकरण से अधिक शक्तिशाली होता है।

दसवें परिच्छेद में जियाराम से निर्मला के रोने और अपने संबंध में सफाई देने की बात सुनकर मंसाराम की धारणा बदलती है। निर्मला की विवशता उसके कथन से प्रकट होती है—"मेरे भाग्य में कलङ्क लिखा हुआ है, वही भोग रही हूँ।" इस पंक्ति में निर्दोष होने का आग्रह है, किंतु उसी के साथ नियति के सामने समर्पण की पीड़ा भी है। वह आरोप को स्वीकार नहीं करती, पर आरोप-मुक्त होने की संस्थागत शक्ति उसके पास नहीं है (प्रेमचंद, परिच्छेद 10)।

मंसाराम का बीमारी की ओर बढ़ना और अंततः उसकी मृत्यु उपन्यास की भावात्मक धुरी है। इस प्रसंग का अध्ययन करते हुए बीमारी को केवल मानसिक शंका का चिकित्सकीय परिणाम बताना उचित नहीं होगा; साहित्यिक पाठ में अधिक महत्त्वपूर्ण है घर से निर्वासन, भावनात्मक टूटन और अनिश्चित संबंधों का क्रम। प्रेमचंद इस त्रासदी के माध्यम से दिखाते हैं कि परिवार का कोई निर्णय केवल उस सदस्य तक सीमित नहीं रहता जिसे उसका प्रत्यक्ष लक्ष्य बनाया गया है। संदेह से उपजी हिंसा अदृश्य होती हुई भी पूरे परिवार को प्रभावित करती है।

**9. मौन, त्याग और प्रतिरोध की सीमाएँ**

निर्मला के चरित्र की आलोचना में प्रायः उसकी सहनशीलता को आदर्श बनाया जाता है। किंतु यह प्रश्न पूछना आवश्यक है कि वह किन परिस्थितियों में चुप रहती है और इस चुप्पी के विकल्प क्या हैं। यदि कोई व्यक्ति अपने पक्ष में बोलने पर और अधिक अपमान, अविश्वास अथवा आर्थिक संकट की आशंका से घिरा हो, तो उसका मौन पूर्ण सहमति का प्रमाण नहीं माना जा सकता। निर्मला के जीवन में आत्मसम्मान बनाए रखने के प्रयास और खुलकर प्रतिरोध न कर पाने की विवशता साथ-साथ विद्यमान हैं।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

सातवें परिच्छेद में निर्मला अपने जीवन के आनंद की संभावना छोड़कर कर्तव्य के निर्वाह को केंद्र में रखने का निर्णय करती है। उसके मन में उठता है—"मेरे लिए जीवन में कोई आनन्द नहीं।" इस वाक्य को केवल त्याग की महानता समझना पाठ की करुणात्मक आलोचना को कमजोर करता है। प्रश्न यह है कि विवाह ने एक युवती को जीवन के आरंभ में ही आनंदहीन कर्तव्य-भाव की ओर क्यों धकेल दिया। त्याग तब सामाजिक गुण माना जा सकता है जब उसमें स्वतंत्र चुनाव हो; दबाव की परिस्थिति में वही त्याग आत्मविलोपन का रूप भी ले सकता है (प्रेमचंद, परिच्छेद 7)।

त्यागी और जूही (2025) ने निर्मला के संदर्भ में आदर्श गृहिणी की धारणा के आलोचनात्मक पक्ष को रेखांकित किया है। इस विचार को आगे बढ़ाते हुए कहा जा सकता है कि निर्मला की नैतिक श्रेष्ठता का वर्णन यदि उसकी निर्णयहीनता को स्वाभाविक मान ले, तो शोध का उद्देश्य अधूरा रह जाएगा। प्रेमचंद करुणा उत्पन्न करते हैं, लेकिन करुणा के भीतर प्रश्न उठाने की संभावना भी रखते हैं—ऐसी कौन-सी व्यवस्था है जिसमें किसी स्त्री को निर्दोष होते हुए भी अपना पूरा जीवन निर्दोषता प्रमाणित करने में लगाना पड़ता है?

निर्मला के प्रतिरोध के छोटे रूपों को भी देखना चाहिए। वह बच्चों को घर से दूर करने का विरोध करती है, संबंधों में निकटता बनाए रखने का प्रयास करती है, गृहस्थी की व्यवस्था संभालती है और संकट में भी संवाद के अवसर खोजती है। ये गतिविधियाँ व्यापक सामाजिक विद्रोह नहीं हैं, लेकिन उसकी निष्क्रियता के निष्कर्ष को चुनौती देती हैं। उसकी सीमाएँ व्यक्तिगत साहस की कमी नहीं, बल्कि सीमित संसाधन और असमान सत्ता-संबंधों से निर्मित हैं।

### 10. कल्याणी, रुक्मिणी और सुधा: स्त्री-संबंधों की विविधता

'निर्मला' में केवल एक स्त्री नहीं, अनेक स्त्रियाँ हैं, जिनकी भूमिकाओं के माध्यम से परिवार की जटिल संरचना उद्घाटित होती है। कल्याणी विवाह के खर्च पर सवाल उठाती है और अपनी दोनों बेटियों की सुरक्षा का विचार करती है। उसके निर्णय सही हों या विवादास्पद, वह परिवार की आर्थिक वास्तविकता को समझने वाली स्त्री के रूप में सामने आती है। पितृसत्ता का अर्थ यहाँ स्त्री की हर क्रिया का पूर्ण अभाव नहीं; बल्कि उसका यह संघर्ष है कि उसकी चिंता निर्णय की अंतिम कसौटी क्यों नहीं बन पाती।

रुक्मिणी घर की वृद्ध सदस्य हैं। उनका निर्मला के प्रति व्यवहार कई बार असहज, आलोचनात्मक और आरोपपूर्ण होता है। इससे स्पष्ट होता है कि पुरुष-प्रधान नियमों का पुनरुत्पादन केवल पुरुषों द्वारा नहीं होता; परिवार में पहले से प्रतिष्ठित स्त्रियाँ भी अपने सीमित अधिकार-क्षेत्र की रक्षा करते हुए दूसरी स्त्री की स्वतंत्रता से आशंकित हो सकती हैं। रुक्मिणी को खलनायिका बनाना उतना ही अनुचित होगा जितना निर्मला को त्रुटिहीन प्रतीक बना देना। दोनों के बीच संघर्ष अधिकार, स्थान और भरोसे के असमान वितरण से जुड़ा है।

सुधा निर्मला के जीवन में भिन्न प्रकार के संबंध की संभावना प्रस्तुत करती है। पच्चीसवें परिच्छेद में निर्मला उसके पास जाकर कुछ समय के लिए चिंता-मुक्त होती है। उस परिवेश में उसे यह अनुभव होता है कि वह भी स्वतंत्र भावना रखने वाला मनुष्य है। मित्रता का यह पक्ष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि जिस घर में उसकी पहचान पत्नी, माता और गृहप्रबंधक के कर्तव्यों से नियंत्रित है, उससे बाहर उसे बिना लगातार मूल्यांकन के बातचीत का अवसर मिलता है। स्त्री-मित्रता यहाँ भावनात्मक शरण और मनुष्यत्व की पुनर्प्राप्ति का सीमित किंतु महत्त्वपूर्ण स्थल बनती है (प्रेमचंद, परिच्छेद 25)।

सुधा के माध्यम से कथा का एक अन्य नैतिक तनाव भी सामने आता है। उसके पति डॉक्टर भुवनमोहन वही व्यक्ति हैं जिनसे निर्मला का आरंभिक विवाह-संबंध टूट गया था। बाद के प्रसंगों में निर्मला के प्रति उनका अनुचित आकर्षण और सुधा की प्रतिक्रिया पुरुष की सामाजिक प्रतिष्ठा तथा नैतिक आचरण के अंतर को

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

उद्घाटित करती है। यहाँ स्त्री-मित्रता केवल सांत्वना नहीं रह जाती; वह पुरुष के व्यवहार को प्रश्नांकित करने की नैतिक क्षमता भी अर्जित करती है। इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि समाज में सम्मानित पेशा और बाहरी सभ्यता अपने आप किसी व्यक्ति के आचरण की विश्वसनीयता प्रमाणित नहीं करते।

इन तीन स्त्रियों को साथ पढ़ने पर 'नारी' की एकीकृत, सरल छवि टूटती है। कल्याणी आर्थिक विवेक और मातृचिंता का रूप हैं; रुक्मिणी पारिवारिक स्थिति और नियंत्रित अधिकार की जटिलता का प्रतिनिधित्व करती हैं; सुधा सहानुभूति एवं संवाद की संभावना बनती हैं। निर्मला इन सबके बीच अपनी अस्मिता बनाए रखने का प्रयत्न करती है। इस विविधता से उपन्यास स्त्री-अनुभव के भीतर वर्ग, पीढ़ी, वैवाहिक स्थिति और घरेलू अधिकार की भिन्नता को व्यक्त करता है।

**11. जियाराम और सियाराम: पारिवारिक विघटन के दूसरे आयाम**

मंसाराम की मृत्यु के बाद कथा का संकट समाप्त नहीं होता। जियाराम का अपने पिता के प्रति तीव्र आक्रोश इस बात का संकेत है कि पारिवारिक विश्वास पर जो आघात पड़ चुका है, वह नई परिस्थितियों में भी जीवित रहता है। अठारहवें परिच्छेद में जियाराम डॉक्टर सिन्हा के सामने पिता के प्रति अपना संदेह प्रकट करता है। अब आरोप की दिशा उलट जाती है—जिस परिवार में पिता पत्नी और पुत्र के संबंध पर संदेह कर रहे थे, उसी परिवार में पुत्र पिता के निर्णयों को विनाश का कारण समझने लगता है (प्रेमचंद, परिच्छेद 18)।

यह उलटाव मनोवैज्ञानिक और सामाजिक दोनों दृष्टियों से अर्थपूर्ण है। पिता की नैतिक प्राधिकार-स्थिति संदेह की प्रक्रिया को नियंत्रित नहीं कर पाती। संदेह की संस्कृति फैलने पर वह स्वयं मुखिया की वैधता को चुनौती देती है। जियाराम का व्यवहार अपने आप में दोषरहित नहीं, किंतु इसे केवल उद्दंडता कह देना परिवार के भीतर उत्पन्न असुरक्षा और आक्रोश की अनदेखी होगा। उसकी प्रतिक्रिया उस वातावरण की उपज है जिसमें निर्णयों के कारण समझाए नहीं गए और भावनात्मक हानि की जिम्मेदारी किसी ने साझा नहीं की।

सियाराम के प्रसंग में दैनिक वस्तुओं, बाजार और गृहस्थी की छोटी-छोटी आवश्यकताओं के माध्यम से बड़ा संकट व्यक्त होता है। बाईसवें परिच्छेद में वस्तु खरीदने की मामूली घटना कटु संवाद में बदल जाती है। एक असुरक्षित घर में साधारण काम भी दोषारोपण का अवसर बन सकता है। बालक के मन में घर का अपनापन क्षीण होने लगता है और आगे चलकर उसका घर से दूर होना परिवार के विघटन को गहरा करता है (प्रेमचंद, परिच्छेद 22)।

इस तरह तीनों पुत्रों की कथा निर्मला की त्रासदी का मात्र विस्तार नहीं है। मंसाराम भावनात्मक निर्वासन और गलतफहमी की पीड़ा, जियाराम अविश्वास तथा विरोध की तीव्रता और सियाराम घर के संरक्षणकारी स्वभाव के क्षरण को व्यक्त करते हैं। एक घर का टूटना प्रेमचंद के यहाँ किसी एक स्त्री अथवा पुरुष की विफलता का परिणाम भर नहीं है; वह असमान निर्णय, अविश्वास और संवादहीनता की दीर्घ प्रक्रिया का संचयी परिणाम है।

**12. स्त्री-अस्मिता और घरेलू नैतिकता की दोहरी कसौटी**

निर्मला की अस्मिता का प्रश्न उसकी सामाजिक भूमिकाओं से पृथक नहीं है। विवाह के बाद वह पत्नी है; तोताराम के पुत्रों के लिए विमाता है; अपनी बच्ची की माता है; घरेलू खर्च सँभालने वाली गृहिणी है। किंतु इन पहचानों का समुच्चय भी उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की रक्षा नहीं कर पाता। उसकी भावनाएँ दूसरों की अपेक्षाओं के अनुसार समझी जाती हैं। पति से पर्याप्त अनुराग न दिखे तो कमी निर्मला में खोजी जाती है; पुत्रों के प्रति स्नेह बढ़े तो उसके नैतिक अर्थ पर प्रश्न उठता है। इस असंभव कसौटी पर स्त्री किसी भी दिशा में पूरी तरह निर्दोष सिद्ध नहीं हो सकती।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

यही दोहरी कसौटी उपन्यास के स्त्री-विमर्श को विशेष महत्त्व देती है। निर्मला से अपेक्षा है कि वह पति का सम्मान करे, पुत्रों का पालन करे, घर की प्रतिष्ठा बचाए और अपनी निजी व्यथा को सार्वजनिक विवाद न बनाए। दूसरी ओर उसके लिए समान रूप से विश्वास, सुरक्षा, आत्मीयता और स्पष्टीकरण का अधिकार सुनिश्चित नहीं है। यह एकतरफा नैतिक उत्तरदायित्व है। सामाजिक व्यवस्था स्त्री के कर्तव्य विस्तार से निर्धारित करती है, जबकि उसके अधिकारों को अस्पष्ट छोड़ देती है।

स्त्री-अस्मिता को केवल विद्रोही वक्तव्य या घर छोड़ देने के निर्णय से नहीं मापा जाना चाहिए। आत्मसम्मान कभी अपने चरित्र पर लगे आरोप से भीतर ही भीतर संघर्ष के रूप में, कभी बच्चों की चिंता के रूप में और कभी मित्र से खुलकर बोलने की इच्छा के रूप में प्रकट होता है। निर्मला की अस्मिता इस प्रकार पूर्णतः समाप्त नहीं होती; वह लगातार दबाई जाती है, टूटती है, स्वयं को बचाती है और नए आघात सहती है। इसी द्वंद्व में उसका चरित्र साहित्यिक रूप से विश्वसनीय बनता है।

मोहना (2026) का अध्ययन 'निर्मला' को सामाजिक न्याय के प्रश्न से जोड़ता है। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि स्त्री की गरिमा के लिए केवल बाहरी संरक्षण पर्याप्त नहीं, बल्कि निर्णय में सहभागिता और उसके कथन को विश्वसनीय मानने की सांस्कृतिक तैयारी भी आवश्यक है। उपन्यास में निर्मला को भौतिक सुविधा देने का प्रयास दिखाई देता है, पर उस पर विश्वास करने का नैतिक आधार कमजोर है। यही अंतर उसकी अस्मिता के संकट को समझने की कुंजी है।

### 13. मध्यवर्गीय प्रतिष्ठा, धर्म और भाग्यवाद की आलोचना

उपन्यास का सामाजिक संसार मुख्यतः ऐसे मध्यवर्गीय परिवारों से निर्मित है जिनके लिए सम्मान, विवाह-व्यय, सामाजिक संबंध और आर्थिक स्थिति परस्पर जुड़े हुए हैं। बाहरी प्रतिष्ठा बनाए रखने की आकांक्षा कई बार वास्तविक साधनों से अधिक महत्त्व प्राप्त कर लेती है। विवाह में खर्च की तैयारी और बाद में धनाभाव की पीड़ा के बीच यह विरोध स्पष्ट है। प्रेमचंद संकेत करते हैं कि यदि समाज की दृष्टि में दिखावा अनिवार्य हो जाए तो परिवार अपने ही भविष्य को संकट में डाल सकता है।

कथा में भाग्य, विधि और नियति की भाषा भी बार-बार उभरती है। संकटग्रस्त पात्र कई बार परिस्थितियों को ऐसे स्वीकार करते हैं मानो उनके परिवर्तन की कोई संभावना नहीं। निर्मला भी अपने जीवन की पीड़ा को भाग्य में लिखे कलंक की तरह अनुभव करती है। यहाँ भाग्यवाद को पात्रों की मानसिक रक्षा-प्रणाली के रूप में पढ़ना अधिक उचित है, लेखक का अंतिम मत मान लेना नहीं। पाठक देख सकता है कि जिन घटनाओं को पात्र नियति समझ रहे हैं, उनके पीछे सामाजिक निर्णय, आर्थिक दबाव और अविश्वास के पहचाने जा सकने वाले कारण हैं।

प्रेमचंद की आलोचनात्मक शक्ति इसी विडंबना में निहित है। पात्र भाग्य कहकर शांत होने की कोशिश करते हैं, लेकिन कथा लगातार मानव-निर्मित कारणों को प्रकट करती जाती है। इस प्रकार नियति का शोक और सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रश्न एक साथ उपस्थित रहते हैं। सामाजिक यथार्थवाद उपन्यास को केवल करुणा का पाठ नहीं बनाता; वह पाठक को कारण और परिणाम के संबंध में विचार करने के लिए भी प्रेरित करता है।

### 14. कथाशिल्प: संवाद, दर्पण, पूर्वाभास और करुणात्मक संरचना

'निर्मला' की कलात्मक उपलब्धि उसकी विषय-वस्तु जितनी ही महत्त्वपूर्ण है। उपन्यास के आरंभ में निर्मला का बचपन और अचानक आया विवाह का निर्णय कथा को तीव्र विरोधाभास देता है। एक ओर गुड़ियों का खेल और बहन के साथ आत्मीयता है, दूसरी ओर पराए घर भेजे जाने का भय। इस संक्रमण से पाठक

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

समझने लगता है कि सामाजिक रीति किसी बालिका के मानसिक संसार को कितनी शीघ्र परिवर्तित कर सकती है। घटना से अधिक उसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव कथा की दिशा निर्धारित करता है।

प्रारंभिक स्वप्न का नदी तथा टूटती नाव वाला दृश्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। एक सुरक्षित नाव में स्थान न मिलना और अस्थिर डोंगी पर बैठने की विवशता निर्मला के भावी विवाह की अनिश्चितता का पूर्वाभास देती है। इसे अलौकिक भविष्यवाणी के बजाय भावनात्मक प्रतीक के रूप में देखना चाहिए। युवती को जिस पार जाने के लिए सामाजिक रूप से बाध्य किया गया है, वहाँ पहुँचने का साधन ही अविश्वसनीय प्रतीत होता है। टूटती नाव उसके जीवन की संरचनात्मक असुरक्षा का सघन प्रतीक बन जाती है (प्रेमचंद, परिच्छेद 1)।

सातवें परिच्छेद का दर्पण तोताराम के आत्मबोध का कलात्मक साधन है। दर्पण में एक ओर निर्मला का यौवन, दूसरी ओर पति का वृद्धत्व तथा असहजता साथ दिखाई देती हैं। यह दृश्य बाहरी वस्तु के सहारे मन की स्थिति को उद्घाटित करता है। उपहारों और शब्दों से जो दूरी छिपाई जा सकती थी, उसका दृश्य प्रमाण दर्पण प्रदान करता है। कथाकार बिना लंबे सैद्धांतिक कथन के वैवाहिक असमानता और पुरुष-असुरक्षा का संबंध मूर्त बना देता है।

संवाद भी उपन्यास की प्रमुख शक्ति है। निर्मला और कृष्णा की बातचीत में स्त्री के घर संबंधी प्रश्न उठते हैं; मंसाराम और जियाराम के संवाद में गलतफहमी टूटती है; जियाराम और डॉक्टर सिन्हा की बातचीत में पिता के प्रति आक्रोश उजागर होता है। इन संवादों का कार्य केवल कथा आगे बढ़ाना नहीं, बल्कि ज्ञान और भ्रम की असमान अवस्थाएँ सामने लाना है। पाठक उन बातों को जानता है जिन्हें पात्र एक-दूसरे से छिपाते हैं या समझ नहीं पाते। इसी अंतर से करुणा और तनाव की निरंतरता बनती है।

उपन्यास की करुणात्मक संरचना किसी एक दुखद अंत पर निर्भर नहीं रहती। छोटी-छोटी आशंकाएँ बड़े निर्णयों में बदलती हैं; उनके दुष्परिणाम नए अविश्वास उत्पन्न करते हैं। इसलिए कथा में दुख आकस्मिक दुर्घटनाओं की सूची नहीं बनता, बल्कि एक संगठित सामाजिक-मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का रूप ग्रहण करता है। प्रेमचंद का शिल्प पाठक को पात्रों से सहानुभूति करने के साथ उनके व्यवहार की सामाजिक पृष्ठभूमि समझने के लिए प्रेरित करता है।

## 15. पाठ की आलोचनात्मक सीमाएँ और वैकल्पिक व्याख्याएँ

'निर्मला' को आधुनिक स्त्रीवादी पाठ के रूप में पढ़ते समय यह सावधानी आवश्यक है कि लेखक की ऐतिहासिक स्थिति और वर्तमान आलोचक की वैचारिक दृष्टि को एक नहीं मान लिया जाए। निर्मला के जीवन में पत्नीधर्म, त्याग और गृहस्थी की रक्षा से जुड़ी परंपरागत अपेक्षाएँ उपस्थित हैं। उपन्यास इन अपेक्षाओं की पीड़ा उद्घाटित करता है, लेकिन उसका समाधान हमेशा स्त्री की पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता या वैवाहिक संस्था के मौलिक पुनर्गठन के रूप में सामने नहीं आता। यह अंतर उसकी उपलब्धि को कम नहीं करता; बल्कि पाठ की ऐतिहासिक जटिलता को समझने में सहायता करता है।

साथ ही निर्मला को पूर्ण निष्क्रिय या पूर्णतः निर्दोष प्रतीक बना देना भी आलोचनात्मक दृष्टि से सीमित है। आर्थिक संकट के समय उसके कठोर व्यवहार और बच्चों से संबंधों में आती कटुता को पाठ स्पष्ट रूप से दिखाता है। इन प्रसंगों को छिपाकर केवल आदर्श नारी की छवि निर्मित करना उपन्यास के यथार्थवाद के विरुद्ध होगा। प्रेमचंद पीड़ित पात्र को भी मानवीय दुर्बलताओं से रहित नहीं बनाते; वे दिखाते हैं कि सामाजिक हिंसा का शिकार व्यक्ति कभी-कभी उसी घर में दूसरे कमजोर सदस्य के प्रति कठोर हो सकता है।

इसी प्रकार तोताराम की आलोचना करते समय उनके भीतर के भय और विडंबना को समझना आवश्यक है। उनके निर्णय हानिकारक हैं, लेकिन वे किसी अमानवीय राक्षस की तरह रचे नहीं गए। इस जटिल चित्रण से

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

उपन्यास समाज की उस व्यवस्था पर प्रश्न उठा पाता है जिसमें असुरक्षित पुरुष भी अधिकार-संपन्न बना रहता है और उसकी व्यक्तिगत आशंका दूसरे सदस्यों के जीवन पर निर्णय थोप सकती है। इस तरह आलोचना व्यक्तियों की निंदा से आगे सामाजिक संबंधों की परीक्षा बन जाती है।

**16. समकालीन प्रासंगिकता**

'निर्मला' का युग वर्तमान समय से भिन्न है; इसलिए उपन्यास में वर्णित प्रत्येक प्रथा या अनुभव को बिना अंतर के आज पर लागू करना उचित नहीं है। फिर भी दहेज के सामाजिक दबाव, विवाह में सहमति, आर्थिक निर्भरता, घरेलू संदेह और स्त्री के निर्णय-अधिकार से जुड़े प्रश्न आज भी विचारणीय हैं। आधुनिक परिस्थितियों में कानून, शिक्षा, रोज़गार और पारिवारिक संरचनाएँ परिवर्तित हुई हैं, पर किसी संबंध में विश्वास और समानता की आवश्यकता समाप्त नहीं हुई। साहित्य की प्रासंगिकता इसी निरंतर प्रश्न उठाने की क्षमता में है, न कि प्रत्येक ऐतिहासिक स्थिति को अपरिवर्तित बताने में।

उपन्यास वर्तमान पाठक को यह समझने में सहायता देता है कि विवाह संबंध की सफलता केवल आर्थिक क्षमता या सामाजिक स्वीकृति से सुनिश्चित नहीं होती। पारस्परिक सम्मान, जीवन-निर्णयों में सहभागिता, शिक्षा के अवसर, व्यक्तिगत गरिमा और भरोसेपूर्ण संवाद भी आवश्यक हैं। यदि परिवार में किसी सदस्य का कथन बिना जाँच के अविश्वसनीय मान लिया जाए, तो बाहरी सुविधा भी उसे सुरक्षित अनुभव नहीं करा सकती। निर्मला का जीवन इसी नैतिक विरोध को तीखे ढंग से सामने लाता है।

पारिवारिक शिक्षा की दृष्टि से भी उपन्यास उपयोगी है। वह दिखाता है कि बच्चों के सामने लिया गया अन्यायपूर्ण निर्णय उनकी आत्मछवि, संबंधबोध और विश्वास को प्रभावित कर सकता है। मंसाराम, जियाराम और सियाराम के अलग-अलग अनुभव इस बात की याद दिलाते हैं कि परिवार के संकट केवल पति-पत्नी के बीच सीमित नहीं रहते। इस प्रकार 'निर्मला' एक ऐतिहासिक साहित्यिक कृति होते हुए भी सम्मानजनक संबंधों और साझा उत्तरदायित्व की आधुनिक चर्चा के लिए महत्त्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करती है।

**17. निष्कर्ष**

प्रस्तुत विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 'निर्मला' को केवल दहेज-विरोधी करुण उपन्यास कह देना उसके अर्थ-संसार को सीमित कर देता है। दहेज का दबाव कथा की आरंभिक स्थिति अवश्य तैयार करता है, लेकिन उसके बाद विवाह में निर्णय-असमानता, भावनात्मक दूरी, स्त्री की आर्थिक पराधीनता, पुरुष की आयुजनित असुरक्षा तथा परिवार के भीतर विश्वास के क्षरण की परस्पर जुड़ी प्रक्रिया विकसित होती है। प्रेमचंद का साहित्यिक यथार्थवाद इन्हीं संबंधों को अलग-अलग घटनाओं की सहायता से उजागर करता है।

पहला प्रमुख निष्कर्ष यह है कि विवाह संबंधी आर्थिक निर्णय स्त्री के जीवन पर गहरा प्रभाव डालते हैं, जबकि स्वयं स्त्री के चुनाव को पर्याप्त स्थान नहीं मिलता। दूसरा, पितृसत्तात्मक नियंत्रण केवल घोषित निषेध में नहीं, बल्कि स्त्री के सामान्य व्यवहार का मनमाना नैतिक अर्थ तय करने की शक्ति में भी प्रकट होता है। तीसरा, निर्मला का मौन निष्क्रिय स्वीकृति नहीं, बल्कि ऐसे असमान संबंध में गरिमा बचाने का सीमित उपाय है जहाँ प्रतिवाद की सामाजिक और आर्थिक कीमत अधिक है। चौथा, मंसाराम, जियाराम तथा सियाराम की कथाएँ बताती हैं कि निजी संदेह सामूहिक पारिवारिक विघटन का कारण बन सकता है।

अध्ययन यह भी दिखाता है कि उपन्यास में पीड़ित और उत्तरदायी पात्रों का विभाजन सरल नहीं है। तोताराम में भय और अधिकार, निर्मला में त्याग और क्षीण होती सहनशीलता, रुक्मिणी में घरेलू सत्ता की सीमित आकांक्षा तथा सुधा में सहानुभूति की संभावना—ये सभी मानवीय जटिलता को प्रस्तुत करते हैं। प्रेमचंद की

उपलब्धि इसी जटिलता में है कि वे किसी एक नैतिक उपदेश के बजाय कारण, परिणाम और मानवीय संबंधों की विडंबना के माध्यम से सामाजिक आलोचना करते हैं।

अतः 'निर्मला' स्त्री-अस्मिता का प्रश्न केवल व्यक्तिगत नैतिकता के स्तर पर नहीं, बल्कि आर्थिक सुरक्षा, संवाद, विश्वास और समान निर्णय-अधिकार के स्तर पर उठाता है। इसका स्थायी साहित्यिक महत्त्व इस बात में है कि यह पाठक को करुणा से आगे बढ़कर उन व्यवस्थाओं की समीक्षा के लिए प्रेरित करता है जिनमें एक निर्दोष व्यक्ति का जीवन दूसरों के भय, प्रतिष्ठा और संदेह का भार उठाते-उठाते नष्ट हो जाता है।

## संदर्भ सूची

1. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय। (तिथि उपलब्ध नहीं)। निर्मला : परिवेश और संरचना-शिल्प (हिंदी उपन्यास संबंधी अध्ययन इकाई)। ई-ज्ञानकोश। https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/77277/1/Unit-5.pdf
2. गुप्ता, आर. (2024)। प्रेमचंद के कर्मभूमि और गोदान में नारी प्रश्न का चित्रण एवं समाधान। साउथ एशियन रिव्यू, 45(3), 229–242। https://doi.org/10.1080/02759527.2023.2173903
3. चक्रवर्ती, एस. जे. (2025)। संघर्ष के स्थल के रूप में विवाह : पितृसत्ता के साथ निर्मला का संघर्ष और समझौता। द क्राइटेरियन : अंग्रेज़ी का एक अंतरराष्ट्रीय शोध जर्नल, 16(1), 214–224। https://doi.org/10.5281/zenodo.14973976
4. चक्रवर्ती, यू. (1993)। प्राचीन भारत में ब्राह्मणवादी पितृसत्ता की अवधारणा : लिंग, जाति, वर्ग और राज्य। इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 28(14), 579–585। https://ruralindiaonline.org/ta/library/resource/conceptualising-brahmanical-patriarchy-in-early-india-gender-caste-class-and-state/
5. चटर्जी, पी. (1989)। नारी प्रश्न का राष्ट्रवादी समाधान। के. सांगरी एवं एस. वैद (संपादक), स्त्रियों का पुनर्पाठ : औपनिवेशिक इतिहास पर निबंध (पृ. 233–253) में। काली फॉर विमेन। https://www.cscsarchive.org/dataarchive/otherfiles/TA001048
6. तिवारी, वी., एवं तिवारी, ए. (2018)। सेवासदन और निर्मला की नायिकाओं के व्यक्तित्व में प्रतिबिंबित प्रेमचंद की नारी मनोविज्ञान संबंधी समझ : एक आलोचनात्मक विश्लेषण। दाथ वॉयेज : अंग्रेज़ी में अंतर्विषयी अध्ययन का अंतरराष्ट्रीय शोध जर्नल, 3(3), 56–77। https://www.daathvoyagejournal.com/imagebag/image355.pdf
7. त्यागी, ए., एवं जूही। (2025)। गृहस्थ जीवन की संतस्वरूप नारी : प्रेमचंद के निर्मला में लैंगिकता, त्याग और यथार्थवाद। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंग्लिश एंड स्टडीज़, 7(5), 563–568। https://doi.org/10.47311/IJOES.2025.19.05.568
8. देवी, सी. एस. (2025)। मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास निर्मला में सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब। द एसपीएल जर्नल ऑफ लिटरेरी हर्मेन्यूटिक्स, 5(2), 217–225। https://literaryherm.org/index.php/ojs/article/view/278
9. प्रेमचंद। (1927)। निर्मला। चाँद कार्यालय। https://hi.wikisource.org/wiki/निर्मला
10. मोहना, सी. (2026)। निर्मला : महिला सशक्तिकरण, समकालीन नारीवादी विमर्श एवं सामाजिक न्याय। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हिंदी रिसर्च, 12(3), 43–46। https://doi.org/10.66856/ijhr.2026.12.3.12198
11. योगुर्त, सी. (2026)। प्रेमचंद की कहानियों में परिवार का चित्रण : सामाजिक इतिहास और साहित्य के अंतर्संबंधों के संदर्भ में। चांकाया विश्वविद्यालय मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका, 20(2), 494–506। https://doi.org/10.47777/cankujhss.1927080
12. राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय। (तिथि उपलब्ध नहीं)। निर्मला (साहित्यिक संग्रह में ग्रंथ-विवरण)। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर। https://www.ndl.iitkgp.ac.in/ch_document/literature_collection/ndl_lit/all_premchand_10